Volume-7, No. 2 Aug.-2020, pp. Hin.37-40

भारतीय समाज में नारीः दशा एवं दिशा

डॉ0 दानवीर सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
एस0डी0 (पी0जी0) कॉलेज मुजफ्फरनगर (उ0प्र0) भारत।

सृष्टि के आरम्भ से ही सृष्टि के निर्माण और संचालन में नारी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। मानव जाति की सभ्यता और संस्कृति के विकास का मूलाधार स्त्री को ही माना जाता है। स्त्री शब्द 'सत्यै' धातु से बना है, जिसका अर्थ 'लज्जायुक्त' होना लिया जाता है। पाणिनि ने 'सत्यै' का अर्थ 'शब्द करना' लिया है। पतंजलि ने कहा है कि 'नारी' को स्त्री इसलिए कहा जाता है कि गर्भ की स्थिति उसके भीतर होती है। उनकी एक दूसरी व्युत्पत्ति के अनुसार स्पर्श, शब्द, रस, रूप और गंध का समुच्चय स्त्री है। पुरुष की ज्ञानेंद्रियों की तृप्ति नारी से होती है। इसलिए उसे 'स्त्री' कहा जाता है।[1] स्त्री सम्पूर्ण आबादी का आधा भाग है। वह एक ऐसी आधी दुनिया है, जो प्रत्येक कदम पर पुरुष द्वारा नियमित और अनुशासित होती है। भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति सदैव एक समान नहीं रही है। इसमें युगानुरूप परिवर्तन होते रहे है। उनकी स्थिति में वैदिक काल से आधुनिक काल तक अनेक उतार–चढ़ाव आते रहे है तथा अधिकारों में भी समय और परिस्थितियों के अनुरूप बदलाव होते रहे हैं।

मुख्य शब्द– समाज, वैदिक काल में स्त्री, सत्यै, वर्तमान का में स्त्री

वैदिक काल में स्त्रियों का स्थान अत्यन्त गौरवास्पद था। इस सन्दर्भ में अल्तेकर का यह कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है कि विश्व की प्रायः समस्त प्राचीन सभ्यताओं का अध्ययन करते समय हम जितने प्राचीनतम् काल की ओर जाते है, स्त्री का स्थान उतना ही असन्तोषजनक पाते है जबकि इसके विपरीत भारतीय सभ्यता के प्राचीनतम् काल पर दृष्टिपात करते है तो स्त्रियों का स्थान समाज में उतना ही महत्वपूर्ण पाते है।[2] इस काल में स्त्रियों को जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों के साथ बराबरी का दर्जा प्राप्त था। मनु ने भी समाज में नारी की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए लिखा है कि–

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्रफला क्रियाः।।[3]

अर्थात जिस घर में स्त्री का सम्मान होता है, वहाँ देवता आनन्दित होकर निवास करते है तथा जहाँ इनका सम्मान नहीं होता है, वहाँ समस्त कार्य निष्फल हो जाते है। समग्र प्राचीन भारतीय संस्कृत साहित्य स्त्री की महिमा–गरिमा से ओत–प्रोत है।[4] उपनिषदों में भी कहा गया है कि 'सृष्टि की सम्पूर्ण रिक्तता की पूर्ति स्त्री से मानी गई है।'[5]

वैदिक काल सभ्यता और संस्कृति की दृष्टि से स्त्रियों की चरमोन्नति का काल था। यद्यपि इस युग में तथा उसके कुछ समय पश्चात् भी कन्या–जन्म का स्वागत नहीं किया जाता था, फिर भी परवर्ती पुत्रों की भाँति इस युग में कन्या का उपनयन संस्कार होता था, उन्हें भी शिक्षा का अधिकार था। उच्च शिक्षा, सुसंस्कृत एवं धनी परिवारों तक ही सीमित थी, किन्तु साधारण परिवारों में कन्याओं को वेद मंत्रो और प्रार्थनाओं के शुद्ध उच्चारण कंठस्थ कराए जाते थे।[6] उसकी प्रतिभा, तपस्या, विद्वता सभी विकासोन्मुख होने के साथ ही पुरुषों को परास्त करने वाली थी। इनमें उर्वशी, इन्द्राणी, काक्षीवती, अपाला, गार्गी, अदिति, मैत्रेयी, घोषा, लोपामुद्रा, शची, रोमशा आदि विदुषी स्त्रियों के नाम उल्लेखनीय है।

वैदिक काल में स्त्रियों को अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता थी। अस्पृश्यता, पर्दा–प्रथा, बाल–विवाह, सती–प्रथा आदि कुप्रथाओं का प्रचलन इस काल में नहीं था। यद्यपि विधवा पुर्नविवाह प्रचलित नहीं था लेकिन विधवाओं के साथ सम्मानजनक व्यवहार किया जाता था। उन्हें पति की सम्पत्ति पर अधिकार था। यह कहा जा सकता है कि स्त्रियाँ किसी भी क्षेत्र में पुरुषों से पीछे नहीं थी। भारतीय समाज के वैदिक काल में स्त्री को पुरुषों के समाज में शिक्षा, धर्म, राजनीति एवं सम्पत्ति के अधिकार एवं सभी मामलों में समानाधिकार प्राप्त थे। अतः वैदिक काल नारियों के लिए 'स्वर्णिम युग' कहा जा सकता है।

वेदों के पश्चात् ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, रामायण और महाभारत के ऐतिहासिक विकास क्रम में उत्तरोत्तर नारी की भूमिका को हाशिए पर धकेला

जाता रहा, क्योंकि भारतीय समाज की संरचना मातृसत्तामक से पितृसत्तामक में परिवर्तित हो गई।

11वीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी के काल को मध्यकाल कहा जा सकता है। 11वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही भारतीय समाज पर उसके आपसी मतभेद एवं फूट के कारण मुस्लिमों का आधिपत्य हो गया था। उनके प्रतिदिन के बढ़ते वर्चस्व के कारण संस्कृति रक्षा एवं मनुस्मृति के नाम पर नारी के स्वतंत्र अस्तित्व का न केवल पूर्णतयाः लोप हो गया वरन् उन्हें समाज की चाहरदीवारों में कैद कर दिया गया। लगातार आक्रमणों में भागीदारी, परिवार एवं समाज को सुरक्षा प्रदान करते रहने के कारण पुरुषों का गौरव बढ़ता चला गया।[7] एक तरह से यह नारियों के सम्मान, विकास और सशक्तिकरण का अंधकार युग था। मुगल शासन, सामन्ती व्यवस्था, केन्द्रीय सत्ता का विनष्ट होना, विदेशी आक्रमण और शासकों की विलासितापूर्ण प्रवृत्ति ने स्त्रियों को उपभोग की वस्तु बना दिया था। उसके मानसिक तथा आत्मिक विकास के द्वारों पर ताले लगा दिए गए। उनकी साहित्यिक उन्नति के मार्ग पर भी अनेकों प्रतिबंध लगा दिए गए। 'स्त्री शूद्रो नाधीयताम्' जैसे वाक्य रचकर उसे शूद्रो की कोटि में रख दिया। मध्यकालीन कवियों और संतों ने नारी को अवगुणों की खान कहकर उसकी रही–सही मान्यता को ठेस पहुँचाया। उन्होंने अपनी रचनाओं में नारी के प्रति अत्यंत कटु दृष्टिकोण अपनाया। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है, ''ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी, ये सब ताडन के अधिकारी, तो दूसरे भक्त कवि कबीर ने तो नारी की परछाई से ही बचने का उपदेश दिया, ''**नारी की झाई परत अंधा होत भुजंग, कह कबीरा तिन की गति जो नित नारी के संग।**''[8] इस प्रकार स्त्रियों की स्थिति दयनीय होती चली गई। परिणामस्वरूप बाल–विवाह, सती–प्रथा, पर्दा प्रथा, बहु–विवाह, अनमेल विवाह, अशिक्षा आदि विभिन्न सामाजिक कुरीतियों का समाज में प्रवेश हुआ, जिसने नारी के निजी एवं सामाजिक जीवन को कलुषित बना दिया।

ब्रिटिश काल में सामाजिक एवं धर्म सुधार आन्दोलन का सूत्रपात हुआ। भारत के कुछ समाज सुधारकों जैसे राजाराम मोहनराय, दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गांधी आदि ने इन कुरीतियों के विरूद्ध आवाज उठायी और स्त्रियों की दशा सुधारने हेतु महत्वपूर्ण योगदान दिया। गांधी जी नारियों के पुनरूत्थान के बहुत बड़े हिमायती थे। उन्होंने बाल–विवाह, दहेज–प्रथा, पर्दा–प्रथा एवं सती–प्रथा का विरोध किया। वे विधवा पुनः विवाह के पक्षधर थे।[9] महिला अधिकार एवं महिला शिक्षा की माँग की गई। महात्मा गांधी के अनुसार– 'स्त्री को अबला कहना उसका अपमान है। यदि शक्ति का अभिप्राय पाश्विक शक्ति है जो स्त्री सचमुच पुरुष की अपेक्षा कम शक्तिशाली है। यदि शक्ति का मतलब नैतिक शक्ति है, तो स्त्री पुरुष से कहीं अधिक शक्तिमान है।'[10] स्त्री–पुरूष समानता के प्रश्न पर गांधी जी का मत है कि 'जहां तक स्त्रियों के अधिकारों का सवाल है मैं कोई समझौता नहीं करूँगा। मेरी राय में, उन्हें ऐसे किसी कानूनी निर्योग्यता का शिकार नहीं बनाया जाना चाहिए जो पुरूष पर लागू नहीं होती। मैं बेटे और बेटियों के साथ बिल्कुल एक जैसा व्यवहार करना चाहूँगा।''[11] गांधी जी एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जिसकी नींव न्याय, समानता व शन्ति पर आधारित हो। इसी के परिणाम स्वरूप सामाजिक पुनर्जागण से प्रगतिशील विचारधारा ने जोर पकडा और समाज–सुधारकों के प्रयास से नारी स्वाभिमान को सहारा मिला। बाल–विवाह, सती–प्रथा, पर्दा–प्रथा आदि सामाजिक कुरीतियों की समाप्ति के साथ–साथ विधवा–विवाह को प्रोत्साहन दिया गया। सन् 1829 ई0 में विलियम बैंटिक द्वारा सती प्रथा निषेध अधिनियम पास किया गया। 1856 ई0 में हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1891 ई0 में एज ऑफ कंसेन्ट बिल आदि अधिनियम बनाए गए। इन सभी कानूनो का समाज पर दूरगामी परिणाम हुआ। ज्ञान के प्रकाश में आलोकित नारियाँ स्वतंत्रता के संग्राम में वीरांगना बनकर कूद पड़ी। सरोजिनी नायडू, विजय लक्ष्मी पण्डित, सुचेता कृपलानी, अरूणा आसफ अली, कप्तान लक्ष्मी सहगल आदि इसके ज्वलंत उदाहरण है। 1910 ई0 से 1920 ई0 तक का दशक ऐसा था, जिसमें सर्वप्रथम अखिल भारतीय महिला संगठनों के प्रयास आरम्भ हुए। 1917 ई0 मे नारी–उत्थान के लिए महिलाओं की भारतीय परिषद का गठन हुआ। इसी प्रकार 1927 ई0 में अखिल भारतीय महिला परिषद्, 1929 में अखिल भारतीय शिक्षा कोष, 1945 ई0 मे कस्तूरबा गांधी मैमोरियल ट्रस्ट आदि संस्थाओं की स्थापना के द्वारा नारी की स्थिति को सुधारने के लिए प्रयास किए गए।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्त्री–पुरुष की समानता को कानूनी अधिकार प्रदान कर नारी विकास के लिए सकारात्मक कदम उठाए गए है। उन्हें विकास की मुख्य धार में समाहित करने हेतु अनेक कल्याणकारी योजनाओं, कानूनों, संगठनों एवं विकासात्मक कार्यक्रमों का संचालन किया गया है। भारतीय संविधान की उद्देशिका, मूल अधिकार एवं राज्य के नीति–निर्देशक तत्वों में ऐसे प्रावधान किए गए जिससे महिलाओं को अग्रसर होने का अवसर मिल सके। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14,15(1),

15(3), 16, 39(ए), 39(डी), 42, 51(1)(ई) में नारी–उत्थान से सम्बन्धित प्रावधान है जो नारी को एक नई दिशा और गति प्रदान करते है। इसी तरह संविधान के 73वें तथा 74वें संवैधानिक संशोधन (1993) के माध्यम से महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण भी दिया गया। हमारे देश में विभिन्न समय में प्रचलित कुरीतियों एवं कुप्रथाओं के निवारण हेतु तथा नारी को सुरक्षा एवं अधिकार देने हेतु समय–समय पर कई अधिनियम पारित किए गए, जिनमें से कुछ इस प्रकार है–

- हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955
- हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 (संशोधन 2005)
- अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 (संशोधित 1986)
- दहेज निषेध अधिनियम, 1961
- प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम, 1961 (संशोधित 1995)
- समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976
- सती आयोग (रोकथाम) अधिनियम, 1987
- राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990
- घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005
- बाल–विवाह प्रतिषेध अधिनियम, 2006
- कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन–उत्पीड़न (रोकथाम, और संरक्षण) अधिनियम, 2013
- मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 (संशोधन 2016)
- मुस्लिम महिला (विवाह अधिकार संरक्षण) अधिनियम 2019

नारी–उत्कर्ष से संबंधित संवैधानिक अधिकारों को मूर्त रूप प्रदान करने एवं उपचार हेतु विभिन्न अधिनियमों में संशोधन भी किया गया और उनकी उपनीतियाँ भी बनाई गई है। इसी प्रकार विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों का क्रियान्वयन भी सरकार द्वारा समय–समय पर किया गया है। जिनमें प्रमुख है–सुकन्या समृद्धि योजना, किशोरी शक्ति योजना, बालिका बचाओं योजना, स्वयंसिद्धा योजना, इंदिरा महिला योजना, वैभव लक्ष्मी योजना इत्यादि।

संवैधानिक अधिकारों में विभिन्न कानूनों के द्वारा नारियों को पुरूषों के समान अधिकार मिलने से उसकी स्थिति में काफी परिवर्तन हुआ है। भारत में महिलाओं ने शिक्षा, राजनीति, मीडिया, कला और संस्कृति, सेवा क्षेत्र, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, खेल–कूद आदि विविध क्षेत्रों में उपलब्धियों के नए आयाम तय किए है। उन्होंने पुरूष प्रधान क्षेत्रों में अपनी योग्यता सिद्ध की है। यथा–श्रीमती इंदिरा गांधी, किरण बेदी, कल्पना चावला, श्रीमती प्रतिभा देवी सिंह पाटिल, सोनिया गांधी, सुषमा स्वराज, ममता बनर्जी, निर्मला सीतारमण, लतामंगेशकर, पी0टी0 ऊषा, सानिया मिर्जा, पी0वी0 सिंधु, एमसी मैरीकॉम आदि नारियों ने अपना महत्वपूर्ण योगदान देकर इतिहास में अपना नाम स्वर्णिम अक्षरों में अंकित कर दिया है। वास्तव में, आज नारी में पर्याप्त जागरूकता आ गई है। देश में अब स्थल, वायु और नौसेना में भी महिलाओं को कमीशन दिया गया है। देश के अनेक स्थानों पर 'महिला थाना' खोले गए है, जिससे महिलाओं पर हो रहे अत्याचार का तुरन्त निवारण किया जा सके। नारी हितों को ध्यान में रखते हुए ही हमारी सरकार ने 'मुस्लिम विवाह अधिनियम' में आवश्यक संशोधन कर 'तीन बार तलाक' कह देने पर नारी–पुरूष संबंध विच्छेद की प्रथा को समाप्त करके नारी को एक नवीन मुक्ति–मार्ग पर लाकर खड़ा कर दिया है। लेकिन फिर भी महिलाएं अनेक स्थानों पर पुरुष प्रधान मानसिकता के कारण शोषित हो रही है। सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है–जनमानस में परिवर्तन एवं महिला पुरुष की दृष्टि में प्रगतिशील सुधार। वर्तमान समय में भारतीय सरकार नारी–उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रमों एवं योजनाओं का संचालन तो कर रही है परन्तु निचले स्तर तक उचित ढंग से न पहुँच सकने के कारण इन योजनाओं का नारियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। समाज में नारियों की क्या स्थिति है? इस पर चिन्तन किए जाने की आवश्यकता है।

दुनिया भर के नारी मुक्ति आंदोलनों की गूँज और समता, आजादी जैसे छलावे भरे खूबसूरत नारे, भारत में अनेक महिला संगठनों की सक्रियता व प्रगतिशील कोशिश के बावजूद पुरुष प्रधान भारतीय समाज में नारी की स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया है। आज भी महिलाएं उन्हीं कुरीतियों से ग्रस्त है जो पहले थी, यथा दहेज–प्रथा, विधवाओं की हीन दशा, पर्दा प्रथा, अनमेल विवाह, कन्या–भ्रूण हत्या, यौन शोषण आदि। इन समस्याओं की तह में जाकर देखें तो शिक्षा का अभाव एवं पाश्चात्य संस्कृति का आगमन महिलाओं की इस जर्जर हालात का सबसे बड़ा कारण है। हमारी सरकार इन कुप्रथाओं के खिलाफ कानून तो बनाती है पर वे सिर्फ कागजों की शोभा बन कर रह जाते है। महिलाओं के उत्थान हेतु नियम तो बनते है पर उन्हें अमली जामा नहीं पहनाया जाता है। केवल कानूनों के द्वारा ही सामाजिक सुधार सम्भव नहीं हैं। सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है नारी में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता, शिक्षा एवं पुरुष मानसिकता में बदलाव। तभी उसका सर्वांगीण विकास

सम्भव है। प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तु ने भी कहा है कि स्त्री की उन्नति या अवनति पर ही राष्ट्र की उन्नति निर्भर है। वही नेपोलियन बोनापार्ट ने भी नारी के विषय में कहा था कि–''मुझे एक योग्य माता दे दो, मैं तुमकों एक योग्य राष्ट्र दूँगा''।

निष्कर्ष– रूप में कहा जा सकता है कि हमारी सामाजिक परम्पराएं नारी की, त्रासदी के लिए सदैव उत्तरदायी रही है। अधिकांश धर्मग्रंथ पुरूषों द्वारा ही लिखे गए है। समाज में जितने भी नियम कानून बनाए गए, वे सभी पुरूष समाज के निजी स्वार्थ से प्रेरित थे। नारी उत्थान के समक्ष पुरूष का अंह सदैव आड़े आता रहा है। यह एक विडम्बना ही है कि भारतीय समाज में नारी की स्थिति अत्यंत विरोधाभासी रही है। एक तरफ उसे 'शक्ति' के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है तो दूसरी ओर 'बेचारी अबला' भी कहा जाता है। इन दोनों ही अतिवादी धारणाओं ने नारीके स्वंतत्र विकास में बाधा पहुँचाई है। 21वीं सदी में नारी–पुरूष को बराबर का दर्जा मिल चुका है फिर भी महिलाएं अभी तक समाज में पूरी तरह से वह स्थान प्राप्त नहीं कर सकी है जो उन्हें मिलना चाहिए। नारी और मुक्ति आज भी नदी के दो किनारे की तरह है जो कभी मिल नहीं पाती। इस बात को अंततः स्वीकार करने की जरूरत है कि नारी को बढ़ावा देकर न सिर्फ नारी समृद्ध होगी बल्कि परिवार, समाज और राष्ट्र भी सशक्त और समृद्ध बनेंगे। आज महिलाओं के मुद्दों और सरोकारों पर कहीं अधिक संवेदनशील और परिपक्वता दिखाने की आवश्यकता है। नारी के बेहतरीकरण के लिए हम सबको अपनी कुत्सित एवं रूढ़िवादी मानसिकता से बाहर निकलना होगा। नारी उत्कर्ष आज सिर्फ एक जरूरत नहीं बल्कि विकास और प्रगति का अनिवार्य तत्व है। समाज में नारी की महत्ता को स्वीकारते हुए स्वामी विवेकानन्द ने भी कहा है कि– ''दुनिया के कल्याण के लिए कोई अवसर नहीं है जब तक कि महिला की स्थिति में सुधार न हो। पक्षी के लिए केवल एक पंख पर उड़ना संभव नहीं है।''

संदर्भ

1. डॉ0 बल्लभदास तिवारी, हिंदी काव्य में नारी, पृ0 36–37
2. ए0एस0 अल्तेकर, प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति, पृ0 155
3. मनुस्मृति, मन्वर्थ मुक्तावली, श्लोक–56 पृ0 114
4. महाभारत– 3/38/11, 12/244/5–6, याज्ञवल्क्य स्मृति–1/182, ब्रहत्पराशर–6/71, पराशर स्मृति–10/25
5. अमयाकाश, स्त्रियाँ पूर्यते, वृहदारण्यकोपनिषद, पृ0 143
6. डॉ0 मीता लाल, प्रेमचंद का नारी–चित्रण, पृ0 11
7. आशा कौशिक, नारी सशक्तिकरणः प्रतिशत विमर्श एवं यथार्थ, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2004, पृ0 200
8. डॉ0 मधु देवी, स्त्रीः भारतीय एवं पाश्चात्य अवधारणा, अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका, शोध, समीक्षा और मूल्यांकन, पृ0 74
9. एम.के. गांधी, विमेन्स रोल इन सोसाइटी, अहमदाबाद, नवजीवन, 1959, पृ0 74
10. डॉ0 बल्लभदास तिवारी, हिंदी काव्य में नारी, पृ0 39–40
11. हरिजन, 17 अक्टूबर, 1929, पृ0 340